International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2024; 10(1): 226-231
© 2024 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 25-11-2023
Accepted: 29-12-2023

डॉ. भुवन चन्द्र जोशी हल्द्वानी
दुर्गादत्त कपिलाश्रमी संस्कृत विद्यालय, पीलीकोठी, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड, भारत

Corresponding Author:
डॉ. भुवन चन्द्र जोशी हल्द्वानी
दुर्गादत्त कपिलाश्रमी संस्कृत विद्यालय, पीलीकोठी, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड, भारत

भारत चम्पू में चित्रित स्त्री पात्र : एक संक्षिप्त परिचय

डॉ. भुवन चन्द्र जोशी हल्द्वानी

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र अनंत भट्ट प्रणीत भारत चंपू में स्त्री पात्र का संक्षिप्त परिचय विषयक है। वस्तुतः भारत चंपू का उपजीव्य ग्रंथ महाभारत रहा है इसलिए स्वाभाविक है कि पात्र योजना भी वहीं से ली गई होगी इसमें मुख्य पात्र कुंती, द्रौपदी, हिर्डिंबा, उत्तरा, माद्री, सुभद्रा, उलूपी, गांधारी, चित्रांगदा आदि प्रमुख हैं ग्रंथ के समन्वित अनुशीलन से ज्ञात होता है कि महाभारत के पात्र जैसे के तैसे इस ग्रंथ में परिलक्षित होते हैं।महाभारत में नारियों के विविधरूप चित्रित हैं। महाभारतकाल में भी कन्या जन्म चिन्तनीय नहीं था। आधुनिक समाज की दृष्टि से इस ग्रंथ में स्त्रियों का जीवन चरितार्थ चित्रित किया गया है।

कूटशब्द: वैदिक, कुन्ती, पुत्री, नारी, भारत चम्पू, कालान्तर, संग्राम, द्रोणाचार्य, द्रौपदी, ऋषिका, निर्वाह, राजकुमारी

प्रस्तावना
संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्त्री पात्र का प्रयोग सम्मानपूर्वक, समादृत भाव से किया गया है।
वैदिक काल से ही समाज में नारी या स्त्री का व्यापक महत्व रहा है। संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्त्री, नारी, महिला, योषा आदि पदों से इनका संज्ञान किया गया है। अतः साहित्य और समाज में इनके मूल्यांकन के लिए सर्वप्रथम इन पदों का व्युत्पत्तिपरक अर्थ जानना प्रासंगिक होगा-

स्त्री
'स्त्यायते गर्भोः यस्यां, वा स्तृणोति आच्छादयति गोपायति रक्षति वा तस्मात् स्त्री'। अर्थात् स्त्री वह है जिसमें गर्भ देह रूप में बढ़ रहा है, अथवा जो गर्भ को आवृत या आच्छादित करके संरक्षित, पालित, पोषित करती है, वह स्त्री है।

नारी
नर का स्त्री लिंग नारी शब्द है। नर और नारी दोनों शब्द नृ=नये धातु से निष्पन्न हैं। जो परिवार को समाज को आगे ले जावे, बढ़ावे, वह नर या नारी है।

योषा

यूष=हिंसायां धातु से योषा शब्द निष्पन्न होता है। 'तिमिरं दोषं दुःखं वा यूषति हिनस्ति नाशयति इति योषा'। अर्थात् जो अन्धकार, दोष, दुःख आदि का विनाश करे वह योषा है।

वैदिक युग में नारी

भारत देश वास्तविक रूप में भा=प्रभा/दीप्ति में रत=रमणशील होना है। अर्थात् भारत वह देश है, जहाँ मानव मात्र की दिनचर्या आभा प्रकाश युक्त है। अतएव वह निरन्तर उन्नतिपथ पर अग्रसर रहता है। भारत देश की संस्कृति आदि संस्कृति है:-

" प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा"।[1]

भारत देश की संस्कृति आदिम सनातन संस्कृति है तथा विश्ववरणीय है। भारतीय संस्कृति में नारी का पूजनीय श्रद्धेय महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ नारी को महिला भी कहा जाता है। यह महिला शब्द महनीयता का द्योतक है।

वैदिक कालीन भारतीय समाज में निर्भ्रान्तरूप से नारियों की पूजनीयता और श्रद्धेयता स्वीकार की गई है। वैदिक युगीन नारियाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समादृत, प्रतिष्ठित और महिमाशालिनी रही हैं। तद्युगीन महिलाएँ- माता, पुत्री, पत्नी, बहिन, वधू आदि सभी रूप में अपने कर्तव्यों का सम्यक् निर्वाह करती रही हैं।

विचार करके देखें तो यह समझा जा सकता है कि, पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रिय जीवन यज्ञ से कम नहीं यह यज्ञ का ही रूप है। सब प्रकार के यज्ञ, श्रेष्ठकर्म स्त्री के बिना सर्वथा असाध्य हैं, अतएव स्त्री को इन यज्ञों का ब्रह्म कहा गया है।[2]

ऋग्वेद में पवित्र गार्हपत्याग्नि, जो पारिवारिक जीवन का केन्द्र है, उसे सदा प्रज्वलित रखना गृहिणी का परम कर्तव्य है। ऋग्वैदिक काल में आनन्द तथा शक्तिदायिनी क्षमता ने सोम को देवत्व से विभूषित किया। ऋग्वेद के नवम मण्डल में सोम देव की स्तुति में दो महिलाओं का उल्लेखनीय योगदान है। वे ऋषिकाएँ हैं- सिकता तथा निनावरी। यह दोनों ऋषिकाएँ दश मन्त्रों की संयुक्त मन्त्रद्रष्ट्री ऋषिकाएँ हैं। अन्य भी अनेक वन्दनीय श्रद्धेय ऋषि महिलाएँ हुई हैं, जो वैदिक वाङ्मय की अभिज्ञ पारङ्गत ऋषिकाएँ हैं- यथा घोषा, काक्षीवती, लोपामुद्रा, ममता, सूर्या, इन्द्राणी, शची, सार्पराज्ञी आदि जो सुशिक्षित, अध्यात्मिक, धार्मिक एवं वैदुष्यादि की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ, असाधारण तथा सामाजिक क्षेत्रों में भी उच्चतम पदप्रतिष्ठित महत्पूर्ण महिलाएँ हैं।

वैदिक संहिताओं में नारी समाज का अपना एक विशिष्ट, महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ऋग्वेद में मन्त्रद्रष्ट्रि ऋषिका महिलाएँ हैं, जिन्होंने ऋचा का सृजन किया। इनमें रोमशा, लोपामुद्रा, अदिति, आश्रेयी, विश्ववारा,शश्वती आंगिरस्वी, अपाला, आत्रेयी, यमी, वैवस्वती, योषा, काक्षीवती, सूर्या, सावित्री, इन्द्राणी, उर्वशी, वागाम्भृणी, शची, पौलोमी आदि का नाम उल्लेखनीय है। जुहू ब्रह्मजाया द्वारा दृष्ट सूक्त के मन्त्र आज भी दूरदृष्टि, दृढ़निर्णय, धर्मपरायणता, आस्तिकता के कारण प्रेरणादायक एवं यथार्थ निणर्य लेने में सक्षम हैं। ऋग्वेद में प्रयुक्त "दम्पत्ति" शब्द में गृही तथा गृहिणी दोनों का समावेश है। यह दम्पत्ति शब्द समाज में "स्त्री-पुरूष" दोनों के समान अधिकारों को दर्शाता है। अग्निहोत्रादि कर्म सपत्नीक ही अनिवार्यतया सम्पादित होते थे। सायण उब्बट महीधरादि सभी वेदभाष्यकारों ने स्त्रीसमाज को सन्ध्या वन्दन, अग्निहोत्र, अध्ययनाध्यापन आदि का अधिकारी माना है। जैसे पुरूष समाज था। पाणिनि पतंजलि आदि आचार्यो ने नारियों के यज्ञ वेदाध्ययनादि अधिकारों का पूर्ण समर्थन किया है। वैदिक काल में नारी का जीवन के हर क्षेत्र में पुरूष के समान बराबरी का अधिकार था।

ऋग्वैदिक समाज में महिलाओं का महत्व सम्मानपूर्ण और उच्चतम था। ऋग्वैदिक काल में बौद्धिक चिन्तन से सम्बन्धित वैदिक मन्त्रों, ऋचाओं को सुरक्षित रखने का दायित्व निर्वाह करते हुए उन मन्त्रों का सस्वर पाठ किया जाता था। इनमें मन्त्रद्रष्ट्रा ऋषियों के साथ मन्त्रद्रष्ट्री बह्मवादिनी, ऋषिकाओं ने भी अन्तः सफूर्त प्राकृतिक शक्तियों की प्रार्थना और उन प्राकृतिक शक्तियों से उत्पन्न सृष्टि और सृष्टि के गुणकर्म भावों को छन्दों में व्यक्त किया है। इन ऋषिकाओं के दर्शन ऋग्वेद के अनुशीलन से प्राप्त होते हैं जो आध्यत्मिक ज्ञान एवं वेद के रहस्यों की ज्ञानी थी। विश्ववारा नामक ऋषिका ने अग्नि की स्तुतिपरक मन्त्र रचना की तथा यज्ञों में ऋत्विक् ब्रह्मा, उद्गाता आदि के रूप में भी कार्य किया।

वैदिक युग से महाभारत तक आते-आते वैदिक युग के पठन-पाठन और दिनचर्या आदि में ह्रासात्मक तथा विकारयुक्त परिर्वतन हुए हैं।

वैदिककालीन समाज आदर्शमूलक समाज था। उस काल में नारियों की सम्मानपूर्ण स्थिति थी। वैदिक वाङ्मय में स्त्री-शिक्षा का उल्लेख मिलता है। विदुषी ऋषिकाओं द्वारा मन्त्रों/सूक्तों की रचना की गई।

स्त्रियों का पारिवारिक जीवन सुखद था। कन्याजन्म, मांगलिक, सुखद और प्रेमास्पद माना जाता था। कन्या मनोनुकूल पतिवरण के लिए स्वतंत्र होती थी। दुर्व्यसन, दुराचरण, हिंसा, परघर सेवानादि वृत्तान्त वैदिक युग में लगभग नहीं थे। महाभारत काल में नारियों की स्थिति, दिनचर्या तथा पुरूषों के चरित्र में भी विकारात्मक परिर्वतन हुए हैं।

महाभारत में नारियों के विविधरूप चित्रित हैं। महाभारतकाल में भी कन्या जन्म चिन्तनीय नहीं था। क्योंकि मान्यता थी,

'यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा'। कन्या समाज में पुत्रवत् ही सम्मानित थी। जिनके कन्या नहीं होती थी वे अपने निकटतम परिचितों, सम्बन्धियों की कन्या को दत्तक पुत्री के रूप में स्वीकार करके उनका पालन-पोषण, शिक्षा, विवाहादि से सम्बन्धित उत्तरदायित्व का निर्वाह करते थे। महाभारतकाल में स्त्रियों की स्थिति अनादृत, दुःखद और चिन्तनीय नहीं कही जा सकती है।

भारत चम्पू के स्त्री पात्र

गान्धारी

गान्धार देश के राजा सुबल की पुत्री गान्धारी थी। गान्धार देश की राजकुमारी होने के कारण ही इनका नाम गान्धारी था।

यह हस्तिनापुर के महाराज धृतराष्ट्र की पत्नी और वहाँ की महारानी भी थी। पति के जन्मान्ध होने के कारण ही इन्होंने भी आँखों पर पट्टी बाँध ली थी। गान्धारी दुर्योधनादि एक सौ धृतराष्ट्र -पुत्रों की माता थी। महाभारत में द्यूतक्रीड़ा प्रमुख शकुनि की बहन थी। सामान्यतः गान्धारी एक सुशील सदाचारिणी पतिव्रत नारी थी।

द्यूतक्रीड़ा का प्रसंग आने पर जब महाराज धृतराष्ट्र ने द्यूत के लिए अपनी स्वीकृति दे दी उस समय गान्धारी ने ही उन्हें सचेत करते हुए कहा था- "मन्द बुद्धि बालकों, खोटी बुद्धि वालों की बातों में आकर कभी ऐसा अविवेकपूर्ण निर्णय नहीं लेना चाहिए। स्नेहवश पुत्र की बातों में आकर आप कहीं अपने कुल का नाश न कर बैठें।

गान्धारी ने दुर्योधन के चरित्र को पहचान कर उसे अभिमानी, पापी, लोभी, कुसंगी, अविवेकी मानते हुए उसे सन्मार्ग पर चलाने हेतु धृतराष्ट्र को समय-समय पर जागरूक किया, श्रीकृष्ण और अर्जुन को अजेय मानकर उसने समझौता करने की प्रेरणा दी। गान्धारी ने पाण्डवों के तेरह वर्ष के वनवास के निर्णय को अन्याय अनुचित और दुर्भाग्यपूर्ण बताया था। किन्तु हठी दुर्योधन ने कभी उसकी बात नहीं मानी। युद्धप्रस्थान काल में गान्धारी ने दुर्योधन से यही कहा था-वह उसे आशीर्वाद कैसे दे सकती है। जब निर्दोष पाण्डव ही उसके अन्याय के शिकार हैं।

मान्यता है कि, उसने अपने पुत्र दुर्योधन को लौहतुल्य शक्ति प्रदान करने के लिए कहा था कि- वह खुले शरीर से उसके समक्ष आकर खड़ा हो जाए तो उसकी नेत्र ज्योती से उसका शरीर लौह तुल्य शक्तिशाली हो जायेगा। दुर्योधन अर्द्धवस्त्रों में था। अतः अर्द्धशरीर को ही लौहशक्ति प्राप्त हो सकी।

महाभारत के भीषण-संग्राम में जब गांधारी के सौ पुत्र मारे गये तो वह शोकाकुल होकर विलाप कर रही थी।

शोकाकुल गान्धारी को सान्त्वना देने तथा पुत्रवध-अपराध की क्षमा याचना को जब युद्धिष्ठिर, भीम, नकुलादि सभी गान्धारी के पास गए तो क्षमा करते समय गान्धारी की दृष्टि नेत्र के अधः प्रान्त से युधिष्ठिर के नाखूनों पर पड़ी उसके नाखून जलकर काले पड़ गए। पुत्रशोक से व्याकुल गान्धारी ने पुत्रों के विनाश का कारण श्रीकृष्ण को मानते हुए उन्हें शाप दिया कि मेरी तरह तुम्हारा भी वंश नष्ट होगा और तुम भी असहाय होकर मारे जाओगे।

कुन्ती

महाभारत की कथा के सभी पात्रों में कुन्ती एक प्रमुख महत्वपूर्ण पात्र है। महारानी कुन्ती वसुदेव की बहन तथा श्रीकृष्ण की बुआ थी। यह महाराज कुन्तीभोज की दत्तक पुत्री थी। वहीं लालन- पालन होने से यह कुन्ती नाम से विख्यात हुई।

बाल्यकाल से ही कुन्ती अतिथि सेविनी तथा साधु महात्माओं के प्रति श्रद्धालु थीं। एक बार महर्षि दुर्वासा महाराज कुन्ती भोज के यहॉ आए और वर्षा के चार मास ठहर कर उन्होंने वहीं बिताये। उनकी सेवा का दायित्व कुन्ती पर था। महर्षि दुवार्सा कुन्ती कृत अनन्य सेवा भक्ति से परम प्रसन्न हुए और जाते समय कुन्ती को देवताओं के आवाहन का मन्त्र दे गये। दुर्वासा ने कहा था- " अपत्यकामना तुम जिस देवता का आवाहन करोगी वह अपने दिव्य तेज से तुम्हारे समक्ष उपस्थित होगा। उससे अपत्य लाभ होगा और तुम्हारा कन्यात्व भी नष्ट नहीं होगा। दुर्वासा के जाने के बाद उन्होंने-कौतूहलवश सुर्यदेव का आवाहन किया। फलस्वरूप सूर्य से तेजस्वी कर्ण की उत्पत्ति हुई। लोकापवाद-भय के कारण इन्होंने नवजात शिशु (कर्ण) को पेटिका में बन्द कर नदी में डाल दिया। नदी में स्नान करते समय अधिरथ नामक व्यक्ति को वह पेटिका मिली उसी ने कर्ण का पालन किया।

कालान्तर में कुन्ती का विवाह हस्तिनापुर के महाराज पाण्डु से हुआ। एक बार महाराज पाण्डु ने मृगदेहधारी किन्दम मुनि का वध कर दिया। फलस्वरूप मुनी के श्राप के प्रभाव के कारण वे सन्तानोत्पत्ति में असमर्थ हो गए। उन्होंने वानप्रस्थ का निश्चय किया। महारानी कुन्ती और माद्री भी पति के साथ वन गई। वहाँ पति की आज्ञा से कुन्ती ने धर्म

पवन तथा इन्द्र के आवाहन से युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन को जन्म दिया।

धर्मात्प्राप युधिष्ठिरंपवनतो भीमं च भीमं द्विषां
जिष्णोर्जिष्णुमतीव धृष्णुमनघा कुन्ती मुनेर्विद्यया।
अन्या सापि तयैव तत्र नकुलं रूपास्पदं गीष्पतेः
सच्छात्रं सहदेवमप्यजनयन्नासत्ययोरन्तिकात्।।[3]

इसी प्रकार माद्री को भी अश्वनीकुमारों के आवाहन का मंत्र बताकर उनको नकुल, सहदेव की माता बनने का सौभाग्य प्रदान किया। महाराज पाण्डु का शरीरान्त होने पर माद्री भी उनके साथ सती हो गई। किन्तु पाण्डव शिशुओं की जीवन रक्षा और लालन-पालन के लिए कुन्ती को जीवन धारण करना पड़ा।

जब दुर्योधन ने पाण्डवों को लाक्षागृह में जलाकर भष्म कर देने का षड्यन्त्र रचा तब माता कुन्ती भी उनके साथ थी। पाण्डवों का यह विपत्ति काल तो था ही, माता कुन्ती उनकी परम रक्षक थी। कुन्ती स्वभाव से परम दयालु थी। स्वयं को शरण देने वाले ब्राह्मण परिवार की रक्षार्थ उन्होंने राक्षस को भोजन देने भीम को भेज दिया।

संतानमूलमिदमेकमपत्यमास्ते
संवर्तकालसहजश्च स राक्षसेन्द्रः।
संभूयते च समयः क्षपया महत्या
संतीर्यतां कथमियं सखि! मे विपत्तिः।।[4]

भीम ने राक्षस को ही मार यमलोक भेजकर सभी नगरवासियों को सुखी कर दिया।

वनवास की अवधि बीत जाने पर भी जब दुर्योधन ने सुई के अग्रभाग के बराबर भी भूमि देना स्वीकार नहीं किया तब माता कुन्ती ने श्रीकृष्ण के माध्यम से अपने पुत्रों को यह सन्देश दिया-वीर क्षत्रियनारियाँ जिस उद्देश्य की सिद्धि के लिए अपने पुत्रों को जन्म देती हैं, उसके लिए समय आ गया है। अतः पाण्डवों को युद्ध के द्वारा अपना अधिकार प्राप्त करना चाहिए।

भीषण महाभारत का संग्राम हुआ। युद्ध में पाण्डव विजयी हुए। वीर माता कुन्ती राज्य सुख-भोग में सम्मिलित न होकर महाराज धृतराष्ट्र, गान्धारी के साथ वन जाकर तापस जीवन यापन करना स्वीकार किया।

कुन्ती के वन जाते समय भीम ने कुन्ती से कहा- यदि अन्ततः आप को वन जाकर तपस्याही करनी थी तो आपने हमें युद्ध के लिए प्रेरित करके इतना विशाल भीषण नरसंहार क्यों करवाया? उत्तर देते हुए कुन्ती ने कहा- " तुम लोग क्षत्रिय धर्म का त्याग करके कायरता और अपमानपूर्ण जीवन व्यतीत न करो, इसलिए हमने तुम्हें युद्ध के लिए प्रेरित किया था। अपने सुख के लिए नहीं। भगवान् के निरन्तर स्मरण के लिए विपत्ति पूर्ण जीवन की याचना करने वाली माता कुन्ती का आदर्श वीरोचित चरित्र धन्य है और अनुकरणीय है।

द्रौपदी

पांचाल देश के राजा द्रुपद की पुत्री थी। अतएव उसका नाम द्रौपदी पड़ा। राजा द्रुपद ने यज्ञ का आयोजन करके एक पुत्री और पुत्र की कामना की। अतः यज्ञ के फलस्वरूप ही द्रौपदी का जन्म हुआ। यज्ञ से उत्पन्न होने के कारण उसे याज्ञसैनी भी कहा जाता है। पंचाल देश में जन्म लेने के कारण उसे पांचाली भी कहते हैं।

द्रौपदी अतीव सुन्दरी रूप गुण विभूषित कन्या थी। उसके पिता राजा द्रुपद की दृष्टि में द्रौपदी के लिए अर्जुन से अच्छा कोई वर नहीं था।

यद्यपि द्रुपद और गुरू द्रोणाचार्य जो, अध्ययनकालीन मित्र थे, किन्तु द्रुपद के द्वारा अपमानित होने पर वह मित्रता शत्रुता में बदल गई। द्रोणाचार्य की आज्ञा से अर्जुन ने द्रुपद को बन्दी बनाकर गुरू द्रोणाचार्य के चरणों में उसे उपस्थित किया। इन सब दुर्व्यवहारों के होते हुए भी राजा द्रुपद ने द्रौपदी का स्वयंवर आयोजित किया और द्रौपदी का वरण करने हेतु मत्स्य वेधन की कठिन शर्त रखी। क्योंकि वे जानते थे की अर्जुन के अतिरिक्त और कोई मत्स्यवेध नहीं कर सकता। सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी अर्जुन ने मत्स्यवेध कर स्वयंवर में द्रौपदी को जीता।

वीरेण तेन विशिखेन विलूनमूलं
चक्रभ्रमेण पतयालु तदा शरव्यम्।
अस्मिन्समाजवलये त्वयमेव दोष्मा-
नित्याहिताभिनयलीलमिवाबभासे।।[5]

घर पहुँचने पर माता की आज्ञा से पॉचों भाईयों ने द्रौपदी को अपनी पत्नी स्वीकार किया।

द्रौपदी के जीवन का कुछ भाग सुखपूर्वक व्यतीत हुआ। किन्तु बाद में कौरवों के छल-कपट का सामना करना पड़ा और पाण्डव अपना राज्य और धन सम्पत्ति सहित पत्नी को जुए में हार गये। दुर्योधन ने भरी सभा में द्रौपदी को अपमानित किया। उसका चीर हरण करने का भी आदेश दिया। द्रौपदी ने श्रीकृष्ण को स्मरण किया। श्रीकृष्ण ने ऐसा चमत्कार किया कि उसका वस्त्र इतना बढ़ गया कि वस्त्र खींचते-खींचते दुःशासन थक कर बैठ गया किन्तु वस्त्र समाप्त नहीं हुआ।

अदृश्यस्यापहारेऽपि वर्धितानेकवाससः।

अम्बरप्रायतातस्या मध्यस्योभयथाप्यभूत्।।
चेलानि कर्षंश्चिरमन्धसूनुस्तस्यास्तु नग्नंकरणः स नाभूत्।
श्रमात्स्खलित्वा धरणौ पतन्सन्दन्तावलेरेवजनव्रजानाम्।।[6]

अज्ञातवास काल में द्रौपदी अपने पाँचों पतियों के साथ राजा विराट के यहाँ गुप्त वेश में रही। द्रौपदी को प्रसाधिका के रूप में विराट की रानी सुदेष्णा की दासी बनकर रहना पड़ा। एक दिन रानी सुदेष्णा ने कीचक के घर से मद्यपात्र लाने के लिए द्रौपदी को भेजा। कीचक ने द्रौपदी पर कुदृष्टि डालते हुए द्रौपदी से रती निवेदन कर उसे कलुषित किया। अनेक प्रकार से समझाने के बाद भी जब वह नहीं माना तो द्रौपदी ने भीम को अपनी सम्पूर्ण व्यथा कह सुनाई। भीम ने कीचक का वध कर दिया।

तत्पश्चात् एक बार दुर्वासा मुनि दस हजार शिष्यों सहित हस्तिनापुर के राजमहल में आये। दुर्योधन ने उनका स्वागत-सत्कार किया। जाते समय दुर्योधन ने उनसे इच्छा प्रकट की- "आप मेरे भ्राता युधिष्ठिर के यहाँ वन में जाकर शिष्यों सहित भोजन कीजिए"। दुवार्सा ने दोपहर में वहाँ जाना स्वीकार कर लिया। दुर्योधन को पाता था कि द्रौपदी का अक्षय पात्र एक बार भोजन कर लेने के बाद कुछ भी नहीं देता। जब दुवार्सा पहुँचेंगे तबतक यह लोग भोजन कर चुके होंगे। दुवार्सा के पहुँचने पर जब उन्हें कुछ नहीं मिलेगा तो इन्हें उनका कोपभाजन बनना पड़ेगा।

इस संकट से उद्धार के लिए द्रौपदी ने श्रीकृष्ण का स्मरण किया। श्रीकृष्ण ने आकर कहा- बहिन अक्षय पात्र लाओ, मुझे बहुत भूख लगी है। द्रौपदी अक्षय पात्र लाई उसमें शाक भाजी का कुछ अंश अटका हुआ था। श्रीकृष्ण ने उसे निकालकर खाते हुए कहा- इस शाक कण के द्वारा मेरे साथ ही सम्पूर्ण जगत् की आत्मा तृप्त हो जाए। बस इतना कहते ही नदी स्नान कर निकले दुवार्सा व उनके शिष्यों का पेट भर गया वे डकार लेते हुए युधिष्ठिर के यहाँ पहुँचे और भोजन नहीं करने को कहा।

परमत्यागमयी, बलिदानी, सेवा परायण, पवित्रता नारी द्रौपदी ने अपने कर्तव्य कर्म का सत्यनिष्ठापूर्वक पालन करते पग पग पर अपने पतियों का साहचर्य निभाया।

सुभद्रा

वसुदेव की पहली पत्नी रोहिणी की पुत्रीसुभद्राहै। यह श्रीकृष्ण और बलराम की छोटी बहन है। अर्जुन तीर्थयात्रा के प्रसंग से नागलोक से निकल कर हिमालय की ओर गए और वहाँ से वह पूर्व दिशा की ओर जाकर वहाँ प्रयास क्षेत्र में आये जहाँ से सेतुतीर्थ और गोकर्ण क्षेत्र में भ्रमण करते हुए प्रभास नामक क्षेत्र में आए। वहाँ सुभद्रा से अर्जुन की भेंट हुई। वहाँ उन्होंने छद्म सन्यासी के रूप में सुभद्रा का हरण किया।[7] अर्जुन और सुभद्रा का अभिमन्यु नामक पुत्र हुआ।

उलूपी

महाभारत में अर्जुन के साथ एक अत्यन्त प्रभावशाली नारी का चरित्र जुड़ा है। वह है मणिपुर की नागलोक की राजकुमारी उलूपी।

उलूपी कौरव्य नामक नागवंशीय राजा की बेटी थी। उसकी दृढ़ता, वीरता व तेजस्विता से सम्पूर्ण क्षेत्र में उसका गहरा प्रभाव व्याप्त था। अर्जुन अकेले वनवास पर थे। प्रत्येक दिन प्रातः मांगलिक यज्ञ, योगाभ्यासादि कर शेष समय शान्तिपूर्वक सन्तों, साधुओं के साथ वार्ता कर बिताते थे। उसी समय उलूपी ने अर्जुन को देखा। उसने अर्जुन के असाधारण पौरूष तथा गुण चरित्र आदि के विषय में चर्चायें सुनी थी। अतः वह अर्जुन को नागलोक ले गई। वहाँ अपना सम्पूर्ण वृतान्त सुनाकर उसने अर्जुन के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा। उलूपी की शौर्य प्रतिभा और सौन्दर्यादि से आकर्षित होकर अर्जुन ने उलूपी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और विवाह कर इरावन नामक पुत्र उत्पन्न किया। उलूपी स्वर्गारोह काल में अर्जुन के साथ रही।

चित्रांगदा

चित्रांगदा मणिपुर नरेश चित्रवाहन की पुत्री थी। वनवास काल में अर्जुन जब मणिपुर पहुँचे और चित्रांगदा पर उनकी दृष्टि पड़ी तो वह उसके रूप सौन्दर्य पर मुग्ध हो गये। अर्जुन ने चित्रवाहन के समक्ष चित्रंगदा से विवाह का प्रस्ताव रखा। चित्रवाहन ने अर्जुन- चित्रांगदा का विवाह करना स्वीकर कर लिया।[8] उसकी शर्त यह थी की जो उस कन्या चित्रांगदा का पुत्र होगा वह चित्रवाहन के पास ही रहेगा। अर्जुन ने स्वीकार कर लिया। अर्जुन चित्रांगदा का विवाह होने पर उनसे उत्पन्न पुत्र का नाम बभ्रुवाहन रखा गया।

हिडिम्बा

पाण्डवों को जब वनवास काल में लाक्षागृह में जलाकर मारने का षड्यन्त्र रचा गया तब वे विदुर के परामर्शानुसार वहाँ से भाग कर वे एक दूसने वन में गए। उस वन में हिडिम्ब नामक नरभक्षी राक्षसराज अपनी बहिन हिडिम्बा के साथ वहाँ रहता था। हिडिम्ब ने एक दिन अपनी बहिन हिडिम्बा को आहार प्राप्ति के उद्देश्य से भेजा। हिडिम्बा ने वहाँ माता कुन्ती सहित पाँचों पाण्डवों को देखा। भीम पर दृष्टि पड़ते ही हिडिम्बा उस पर मुग्ध हो गई।

रूधिरं पातुकामेन तेन वो हन्तुमीरिता।
अधरं पातुकामाऽहमस्मि ते रूपसंपदा।।[9]

हिडिम्बा ने भीम को अपने भाई हिडिम्ब की योजना बता दी। इधर विलम्ब होने पर हिडिम्ब भी वहाँ आ गया। वहाँ

की स्थिति देखकर हिडम्ब कुपित हुआ और उसने पाण्डवों पर आक्रमण कर दिया। भीम ने हिडिम्ब का वध कर दिया।

स्वसुः समक्षं स्वमेव मुष्ट्याबलं बिडौजा इव वज्रसख्या।
हिडिम्बमेनं यमराजधानीकुटुम्बिमुख्यं कुरूते स्म भीमः।।[10]

तत्पश्चात् कुन्ती की अनुमति से वन में ही भीम और हिडिम्बा का विवाह हुआ उनसे एक पुत्र हुआ। उसका नाम घटोत्कच रखा गया।

पुत्रं तत्र घटोत्कचं पवनभूसङ्गादनङ्गातुरा
प्राप्तं सर्वगुणैर्मनोजवसतां प्रासूत नक्तंचरी।
कुर्या वः स्मृत एव कर्मसु हरेः शक्तेरपि स्रंसना-
मित्युक्त्वा स पितृन्यथाभिलषितं युक्तस्तया निर्ययौ।।[11]

हिडिम्बा माता कुन्ती सहित सभी पाण्डवों को शालिहोत्र आश्रम में ले गई। वहाँ उसने उनको बताया की वहाँ व्यास उनसे मिलने आएंगे और उसके बाद इनके सारे कष्ट दूर हो जायेंगे।

उत्तरा

उतरा राजा विराट की पुत्री थी। अज्ञातवास काल में राजा विराट के यहाँपाण्डव गुप्त रूप में रह रहे थे। वहाँ बृहन्नला रूपधारी अर्जुन ने उत्तरा की नृत्य संगीत आदि की शिक्षा प्रदान की । कौरवों ने जब राजा विराट की गायों का हरण कर लिया उस समय अर्जुन ने कौरवों से युद्ध करके अपूर्व पराक्रम प्रदर्शित किया।
अर्जुन की उस वीरता से प्रभावित होकर राजा विराट ने अपनी पुत्री का विवाह अर्जुन से करने का प्रस्ताव रखा, किन्तु अर्जुन ने यह कहकर की उत्तरा उनकी शिष्या होने के कारण उनकी पुत्री के समान है। अतः अर्जुन ने उस विवाह प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। कलान्तर में अर्जुन-सुभद्रा के पुत्र अभिमन्यु के साथ। उत्तरा का विवाह सम्पन्न हुआ। चक्रव्यू भेदन काल में अभिमन्यु उत्तरा से मिलने गया तब उसने यही कहा था-
हे उत्तरा के धन रहो तुम उत्तरा के पास ही। उत्तरा के एक भाई था, उसका नाम था -"उत्तर"।

माद्री

मद्र देश की राजकुमारी एवं राजा शल्य की बहिन थी माद्री। माद्री हस्तिनापुर के राजा पाण्डु की दूसरी पत्नी थी। एक बार युद्ध संकट काल में महाराज पाण्डु ने मद्रदेश की सहायता की और मद्र देश विजयी हुआ। अतएव मद्रनरेश शल्य ने अपनी बहिन माद्री से विवाह का प्रस्ताव महाराज पाण्डु के पास भेजा और महाराज पाण्डु ने माद्री को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लिया।
पाण्डु विश्व विजयी होकर हस्तिानापुर लौटे। माद्री के नकुल और सहदेव नामक दो पुत्र थे।

धर्मात्प्राप युधिष्ठिरंपवनतो भीमं च भीमं द्विषां
जिष्णोर्जिष्णुमतीव धृष्णुमनघा कुन्ती मुनेर्विद्यया।
अन्या सापि तयैव तत्र नकुलं रूपास्पदंगीष्पतेः
सच्छात्रं सहदेवमप्यजनयन्नासत्ययोरन्तिकात्।।[12]

किन्दममुनि के श्राप के प्रभाव से पाण्डु की मृत्यु होने के बाद माद्री भी उनकी चिता के साथ सती हो गई। माद्री एक वीर पतिव्रत महिला थी।

समीक्षा-अनन्तभट्ट विरचीत भारतचम्पू काव्य में वर्णित स्त्री पात्रों के विवेचन से ज्ञात होता है कि कवि ने अपने काव्य में जिन स्त्री पात्रों के माध्यम से कथा को विस्तार प्रदान किया है वे सभी पात्र महाभारत के समान ही वर्णित हैं चूकि कवि का आधार ग्रन्थ महाभारत है।
अतः प्रकृत काव्य की पात्र योजना में महाभारत का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता हैं अतः समीक्षात्मक रूप से कहा जा सकता है कि प्रकृत काव्य में कवि की पात्र योजना एवं उनका चरित्र विस्तार कथाओं के अनुरूप ही है।

सन्दर्भ

1. यज्ञों में श्रेष्ठतमं कर्म- उपनिषद्
2. स्त्री ब्रह्मा बभूविथ- ऋग्वेद 8.33.19
3. भारत चम्पू श्लोकसं. 1/46
4. भारत चम्पू श्लोकसं. 2/45
5. भारत चम्पू श्लोकसं. 2/80
6. भारत चम्पू श्लोकसं. 4/41-42
7. भारत चम्पू श्लोकसं. 3/76
8. भारत चम्पू श्लोकसं. 3/39-40
9. भारत चम्पू श्लोकसं. 2/29
10. भारत चम्पू श्लोकसं. 2/35
11. भारत चम्पू श्लोकसं. 2/36
12. भारत चम्पू श्लोकसं. 1/46